ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-3* June- 2021
Anthology : The Research

वैदिक प्रतिमा–विज्ञान

Vedic Iconography

(Refers to the antiquity of Icongraphy)

Paper Submission: 04/06/2021, Date of Acceptance: 15/06/2021, Date of Publication: 25/06/2021

सीमा श्रीवास्तव
सहायक प्राध्यापक,
प्राचीन इतिहास विभाग,
भवानी प्रसाद पाण्डेय पी0 जी0 कालेज,गोरखपुर उत्तर प्रदेश, भारत
(सम्बन्ध दी0 द0 उ0 गो0 वि0 वि0 गोरखपुर)

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में विवेच्य काल के सन्दर्भ में प्रतिमा शब्द का अर्थ, विवेचन एवं उसका स्वरुप निर्धारण करने का प्रयास किया गया है । यह शोध वैदिक कालीन देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ तथा उनकी लक्षणागत वैशिष्टय को रेखांकित करता है और ऐतिहासिक शोध प्रणाली पर आधारित है । इस शोध पत्र में प्रतिमा से तात्पर्य भक्तिभावना से भावित देवविशेष की मूर्तिअथवा देवभावना से अनुप्राणित पदार्थ (संसाधन) विशेष की प्रतिकृति से है । वैदिक प्रतिमा विज्ञान में देवी–देवताओं की उपासना को प्रमाणित करने वाले विवरण प्राप्त होते हैं ।

मेरे शोध का उद्देश्य वैदिक वाङ्मय में प्रतिमा विज्ञान (निर्माण) को प्रमाणित एवं सत्यापित करना एवं वैदिक ज्ञान को संजोना है। प्रतिमा निर्माण केलिए निश्चित नियमों और लक्षणों का विधान होता है इसी सन्दर्भ में वैदिक काल में उल्लिखित प्रतिमाशास्त्रीय शब्दों का अध्ययन करना है जिससे यह ज्ञात हो सके कि प्रतिमा का स्वरुप निर्धारण वैदिकयुग से स्थापित था । प्रतिमा विज्ञान की वैदिक साहित्य में उल्लिखित प्राविधिक शब्दावली, विवरण, तथ्यों का वैज्ञानिक सत्यापन करना जिससे यह प्रमाणित हो सके कि प्रतिमा विज्ञान का स्वरुप वैदिक युग में निर्धारित हो चुका था। इस शोध पत्र में उन वैदिक साहित्य में उल्लिखित संसाधनों (पदार्थो) की शब्दावली को भी प्रकाशित किया गया है जिनसे प्रतिमा निर्माण की पुष्टि होती हो ।

In the present research paper, an attempt has been made to determine the meaning, interpretation and form of the word 'Pratima' in the context of the descriptive period. This research outlines the idols of the gods and goddesses of the Vedic period and their characteristic features and is based on the historical research method. In this research paper, the meaning of the idol is the idol of a particular deity engrossed in devotion or a replica of a particular substance (resource) inspired by the spirit of the deity. In Vedic iconography, descriptions confirming the worship of gods and goddesses are found.

The purpose of my research is to verify and verify iconography (construction) in Vedic literature and to treasure Vedic knowledge. There is a provision of certain rules and symptoms for making an idol. It may be known that the form determination of the idol was established from the Vedic age. Scientific verification of the technical terminology, description, facts mentioned in the Vedic literature of iconography, so that it can be proved that the form of iconography had been determined in the Vedic age. In this research paper, the terminology of those resources (substances) mentioned in the Vedic literature has also been published, which confirms the construction of the statue.

मुख्य शब्द : उक्थ, सुलोहिता, उत्स, प्रतिकृति, संदृश, पद्मसंभव, अधिविकर्तन, कृत्नु, रिप्रवाह, म्लात, युगांतर, प्रशिष्ट आदि ।
Uktha, Sulohita, Utsa, Replica, Sansara, Padmasambhava, Adhivikartan, Kritnu, Reflow, Malat, Yugantar, Prashish etc

प्रस्तावना

वैदिक वाङ्मय के अध्ययन से ज्ञात होता है की मानवीय सभ्यता के उषःकाल में ऋग्वैदिक ऋषि प्रजापत्य ने सर्वप्रथम प्रभा एवं प्रतिभा शब्द का उल्लेख किया है–

"कासीत् प्रमा प्रतिमा किं निदान माज्यं किमासीत् परिधिः क आसीत् ।
इन्दः किमासीत प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयंजन्त विश्वे ।।"

इस मंत्र में यह जिज्ञासा व्यक्त की गयी है कि जब सम्पूर्ण देवों ने यज्ञ किया, तब उसका प्रमाण क्या था ? प्रतिमा क्या थी, उसका कारण क्या था ? सीमा क्या थी ? छन्द क्या थी ? तथा उक्थ क्या था ? इस प्रश्न के उत्तर में वैदिक वाङ्मय के प्रथम अक्षर 'अ' और 'अ' से उत्पन्न अग्नि तथा अग्नि स्थान यज्ञ की वेदी को अग्नि की शिखा को प्रतिमा माना गया है– 'अग्निं इडे पूर्वोहिंत' क्योंकि अग्नि हरिकेश[1] हिरण्यश्मश्रु[2], घृतपृष्ठ[3], शतजिह्वा[4] है तथा उसे काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनीं, विश्वरुची[5] कहा गया है। अग्नि के स्वरुप का सर्वाधिक विवरण वैदिक साहित्य में उल्लिखित है, जिसका रूपायन यज्ञवेदिका में किया गया है, यहीं से प्रतिमा का मूल उत्स उत्थित होता है ।

श्वेताश्वतर उपनिषद्[8] में भी प्रतिमा के सम्बन्ध में निराकार ब्रह्म का उल्लेख करते हुए ऋषि कहता है–

"न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः ।।"

अर्थात उसकी (ब्रह्म) प्रतिमा नहीं है,उसका नाम ही यशस्वी है । इससे यह संकेतिक है कि वैदिक परंपरा में प्रचलित प्रतिमा का बौद्धिक चिंतन की पराकाष्ठा में उपनिषद में ऋषि प्रतिमा की अर्चा का निषेध करते हुए निराकार ब्रह्म के स्वरुप का प्रतिपादन करता है ।

प्रतिमा के पर्यायी पद

मूर्ति या प्रतिमा शब्द हेतु आंग्ल भाषा Icon या Image प्रचलित है । इसमें Image शब्द लैटिन Imago से उत्पन हुआ है, जिसका तात्पर्य सादृश्यता से है । प्रतिकृति, प्रतिमा, अर्चा, बिम्ब, संदृश तथा अनुकृति इत्यादि शब्द इसी अर्थ के द्योतक हैं। इन शब्दों का प्रयोग प्राचीन वाङ्मय में प्रचुर रूप से प्राप्त होता है।

ऋग्वेद में 'दिव्य सुवर्ण गरुत्मान' तथा 'त्रिविक्रम' से विष्णु वाहन गरुड़ तथा विष्णु के वामन 'त्रिविक्रम' रूप का विकास हुआ। सूर्य के एकाश्व, चतुराश्व तथा बहुताश्व विवरण से सूर्यरथ का स्वरुप निर्धारित हुआ। सुपर्णा, सूर्य, सूर्यरथ से संकेतिक है कि वैदिक काल में इनके रुप का अंकन किया गया होगा, क्योंकि कठोपनिषद[7] में संदृश शब्द के उल्लेख में आँख से रूप को देखने का अभिप्राय है। श्वेताश्वतर उपनिषद[8] में भी संदृश शब्द इसी अभिप्राय में प्रयुक्त है। ऋग्वेद में सूर्य की जो विशेषताएँ वर्णित हैं, उन्हीं से सूर्य मूर्तियों का निर्माण हुआ। अतः ऋग्वैदिक युग से ही सूर्य रूप का निर्माण हो चुका था। ऋग्वेद[9] में रूद्र की प्रतिमाका विवरण देते हुए कहा गया है कि स्थिर अंगो से युक्त, बहुभुज, भयावह भृकुति तथा स्वर्णिम वर्ण से चमत्कृत रूद्र विवरण, रूद्र की मानवमूर्ति का स्पष्ट चित्रण है। अतः इसमें लोकप्रिय देवताको शिव को रूद्र एवं महादेव के रूप में परिकल्पित किया गया है।[10] ऋग्वेद में शिव के लिंग रूप की भी परिकल्पना की गयी थी, क्योंकि इसे इस ग्रन्थ में शिश्नदेव कहा गया है।[11] शैव प्रतिमा के सन्दर्भ में शिव के अर्द्धनारीश्वर रूप का विवरण सृष्टि के आवश्यक तत्व स्त्री–पुरुषको भी प्रतिबम्बित करता है । वेदों में इसी द्वन्द्व को स्त्री–पुरुष या कुमार–कुमारी कहा गया है ।[12] प्रत्येक स्त्री अर्ध भाग में पुरुष और प्रत्येक पुरुष अर्ध भाग में स्त्री है ।[13] मिथुन या अर्धनारीश्वर अभिप्राय का यही स्वरुप है ।

वैदिक साहित्य में वरुण की मूर्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह सवर्ण वस्त्रों से अलंकृत तथा तेज से चमत्कृत है जिसके चतुदिक अनुचर आसीन है ।[14] ऋग्वैदिक मंत्र में इंद्र को चार श्रृंगयुक्त, त्रिपद, द्विसिर तथा सप्तभुज कहा गया है । ज्ञात है कि पं० राम गोविन्द त्रिवेदी ने ऋग्वेद के मंत्रो का भाष्य लिखते हुए अनेक ऐसे मंत्रों का उल्लेख किया है जो मूर्तिपूजा को प्रमाणित करते हैं ।[15]

ध्यात्व्य है कि गणपति शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद में हुआ है[16] किन्तु यहाँ गणपति शब्द वृहस्पति के लिए प्रयुक्त है जो मंत्रों के अधिपति है । अतः वैदिक गणपति किसी विशिष्ट देवता की ओर इंगित तो नहीं करता, किन्तु वह उस शक्ति का अवश्य प्रतीक है जो पूजा का आधार है । वैदिक गणपति की जो विशेषताएं साहित्य में वर्णित है, परवर्ती युग में गणेश का स्वरुप उसी से विकसित हुआ । स्पष्टतः वैदिक युग में गणपति एक अस्पष्ट देवता के रूप में पूज्य थे, जिनको इंद्र, वृहस्पति, मरूत से सम्बद्ध किया गया है । वैदिक गणपति के गुणों के ही आधार पर उत्तरवैदिक गणेश का रूप निर्धारित हुआ ।

वैदिक प्रतिमा विज्ञान में न मात्र देव अपितु देवी उपासना को प्रमाणित करने वाले विवरण भी प्राप्त होते हैं । यथा–अदिति (दैवी मातृ), उषा (उषः काल की देवी), पृथक, वाक् (वाणी की देवी), सरस्वती (नदी देवी) इत्यादि प्राप्त होते हैं । इसमें पौराणिक देवियों के नाम का तो अभाव है किन्तु उनका स्वरुप ऋग्वैदिक देवियों से ही विकसित हुआ । विष्णु शक्ति के रूप में मान्य लक्ष्मी ऋगवेद में 'श्री लक्ष्मी' के विविध रूपों से ज्ञात है । यथा– वह पद्मासन, पद्महस्ता, हस्ति द्वारा आवर्जित घटों से अभिषिज्वित, वह पूर्णघट अर्थात वैभव के प्रतीक से भी सम्बद्ध थी, जिसमें वह धन्य–धान्य की देवी के रूप में मान्य हुई । वह मातृदेवी के रूप में भी प्रतिष्ठित हुई । ऐसी प्रतीत होता है कि ऋग्वैदिक भी शुभ उपाधि रूप में प्रयुक्त है किन्तु अनेक देवियाँ ऐसी वर्णित हैं जो परवर्ती युग में श्री लक्ष्मी की विशेषताएं बनी ।[17]

ऋग्वैदिक श्रीसूक्त में श्री लक्ष्मी का विकसित विवरण से प्राप्त होता है ।[18] इसमें लक्ष्मी के लिए प्रयुक्त उपाधियों–पद्महस्ता, पद्ममालिनी, हिरण्यवर्णा, पद्मस्थिता, हेमामलिनी, हस्तनाद, प्रमोदिनि, पद्मसंभवा, चंचला इत्यादि से लक्ष्मी प्रतिमा का स्वरुप निर्धारित हुआ ।[19] मातृदेवी के रूप में वैदिक साहित्य में सर्वाधिक लोकप्रियता अदिति को प्राप्त हुई थी ।[20]

प्रतिमा–प्रविधि

ऋग्वेद में विभिन्न प्रतिमाओं के निर्माण की प्राविधिक शब्दावली का उल्लेख प्राप्त होता है । यथा–अधिविकर्तन[21]–छांटना, तराश कर अलग करना, अनभिम्लात वर्ण–[22] तनिक भी फीके रंग का नहीं, अधिविकर्तन[23]–अतिरिक्त अंश को छील कर अलग करना, अनभिस्त[24]–निर्दोष, अनवद्यरूप[25]–निर्दोष, बनावट का, अरंकृत[26]–अलंकृत, आकृत[27]–बनाया हुआ, निर्मित, आकृति[28]–बनावट, निर्मित, आमा–कच्चा कृत्नु[29]–कारीगर, चाक्ष्म[30]–सुन्दर, त्रिधातु[31]–तीन वस्तुओं–पदार्थों का मिश्रण,

प्रभा[32]–माप, प्राक्कलन, म्लात[33]–मुलायम बनाया हुआ, म्रद[34]–मुलायम, रिप[35]–मिलावटी पदार्थ, रिप्रवाह[36]–मैल हटाने वाला, विष्टवी, शमी[37]–परिश्रमी, सुक्रतु[38]–सुन्दर बना हुआ, सुक्रत[39]–बुद्धिमान, सुदक्षिण[40]–कला निपुण, श्री[41]–मिलाना, घोलना, अग्नितप्त–आग में पकाया हुआ, अतप्ततनू[43]–कच्चा, जिसे पकाया नहीं गया है, अनुदह[44]–अनुकूल ताव पर पकाना, छन्द[45]–शक्ल, आकृति, अग्निभ्राज[46]–आग जैसा चमकीला, अदब्धधीति[47]–जिसकी दस्तकारी बेजोड़ हो, निष्णात, इत्यादि ।

संसाधन

ऋग्वेद में उन संसाधनों का भी उल्लेख है जिनसे प्रतिमा निर्मित की जातीथी। वैदिक वाङ्मय में प्रयुक्त वटिकाश्म–[48]–चिकने प्रस्तर, शिवतीची[49]–श्वेत प्रस्तर, चंद्रमिव[50]–चाँदी जैसा, हिरण्यमिव[51]–सोने जैसा, चन्द्रवर्ण[52]– चाँदी के रंग का, रजत[53]–चाँदी, रुक्म[54]–सोना, हिरण्यवर्ण[55]–सोने के रंग का इत्यादि शब्द मूर्ति निर्माण में प्रयुक्त संसाधनों की ओर आकृष्ट करती हैं और मूर्ति निर्माण को द्योतित करती हैं ।

वैदिक वाङ्मय में उल्लिखित एवं विवेचित सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि मूर्तिपूजा का प्रचलन विवेच्य काल में अवश्य था, जिनका क्रमशः विकास उत्तरवैदिक काल में हुआ। वस्तुतः ऋग्वेद में प्रयुक्त शब्दावली, सूरी–सूर्योपासक, भक्त, शिश्नदेव–लिंगोपासक, वृषाकपायी–कपीन्द्र के उपासक, आद्य हनुमान के उपासक।, अगस्त्य–रुद्रों या मरुतों के उपासक, वरुणप्रशिष्ट–वरुण के उपासक इत्यादि वैदिक प्रतिमा विज्ञान को प्रमाणित व स्थापित करती है। उपनिषदों के आध्यात्मिक परम्परा की प्रतिक्रिया स्वरुप साकार अर्चा की आवश्यकता ने प्रतिमाओं के निर्माण की जिस परम्परा का प्रवर्तन किया, उसका शास्त्रीय विकास पाणिनी के अष्टाध्यायी में परिलक्षित होता है और वैदिक प्रतिमा विज्ञान का विकास कालांतर में स्पष्टतः दिखाई देता है जो एक युगान्तर प्रस्तुत करता है । उपर्युक्त सन्दर्भ में मूर्तियों के निर्माण के वैज्ञानिक विधियों के संकेत प्राप्त होते हैं। वैदिक काल प्रतिमा निर्माण की प्राचीनता को भी संकेतिक करती है। अतः वैदिक वाङ्मय में उल्लिखित एवं विवेचित सन्दर्भ से ज्ञात है कि मूर्ति पूजा का प्रचलन वैदिक काल में अवश्य था। क्योंकि यहाँ से मूर्तियों के निर्माण के वैज्ञानिक विधियों के संकेत भी प्राप्त होते हैं ।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत शोध पत्र वैदिक प्रतिमा अनेक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, क्योंकि मूर्ति निर्माण की शुरुआत या बीज बोने का कार्य वैदिक काल से ही किया गया था। वैदिक साहित्य में इससे जुड़े अनेक प्रमाण मिलते हैं। यद्यपि मंदिर निर्माण के साथ अनुपलब्ध है, तथापि, गुप्त काल के दौरान, देवताओं और देवी की पूजा भी मूर्त रूप में की जाती थी, इसके पर्याप्त प्रमाण यहां उपलब्ध हैं। वैदिक साहित्य मूर्ति निर्माण के लिए प्रयुक्त शब्दों से भरा पड़ा है। इसी शब्दावली को इस शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है। इसमें साहित्यिक साक्ष्यों के आलोक में देवी–देवताओं की प्रतिभाओं की रचना की पुरातनता पर प्रकाश डाला गया है। आदर्श निर्माण की सूक्ष्म विधियों को संदर्भित शब्दावली इस तथ्य की पुष्टि करती है कि वैदिक काल में आदर्श पूजा प्रचलन में थी और निर्माण भी किया जाता था, लेकिन नाशवान सामग्री (लकड़ी आदि) से बने होने के कारण, वे कलाकवलित हो गए। प्रामाणिक एवं रचनात्मक संदर्भ सूची एवं साक्ष्य से पूर्ण होने के कारण शोध पत्र विद्यार्थियों एवं पाठकों के ज्ञान प्राप्ति में लाभकारी सिद्ध होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *ऋग्वेद– 3/2/13*
2. *ऋग्वेद– 5/7/7*
3. *ऋग्वेद– 5/4/3*
4. *ऋग्वेद– 3/6/2*
5. *मुंडकोपनिषद– 1/24*
6. *श्वेता0 उ0– 4/9*
7. *कठो– 2/3/9*
8. *श्वेता0 उ0 4/9 न संदृशे तिष्ठाति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यन्ति कश्चनैनम्*
9. *ऋग्वेद– 2/33/9– स्थिरेभिरंगैः पुररूप उग्रो बभ्रुःशुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः ।*
10. *ऋग्वेद– 1/14/7/46/2*
11. *राव, ई0एच0आई0, जि0–2, भाग–1, पृष्ठ–58–बनर्जी, डी0एच0आई0, पृष्ठ–463*
12. *अथर्व0 10/8/27*
13. *ऋग्वेद– 1/164/16 स्त्रियः सतीस्ता उ में पुंस आहुः ।*
14. *ऋग्वेद– 1/25/13 विभ्रदद्रापि हिरण्ययं वरुणो वस्त्र निर्णिजम् । परि स्पशो निषेदिरे ।*
15. *त्रिवेदी, रामगोविन्द, ऋग्वेद संहिताः ऋग्वेद– 7/56/14*
16. *ऋग्वेद– 2/23/1 37– ऋग्वेद– 10/16/9*
17. *अथर्व0– 8/46/3 38– ऋग्वेद– 3/60/3*
18. *ऋग्वेद–10/115/10 1/110/4*
19. *ऋग्वेद– 8/58/6 39– ऋग्वेद– 3/31/12*
20. *अथर्व0– 16/2/6 40– ऋग्वेद– 3/31/3*
21. *ऋग्वेद– 10/5/25 41– ऋग्वेद– 7/32/3*
22. *ऋग्वेद– 2/35/13 42– ऋग्वेद– 9/71/4*
23. *ऋग्वेद– 10/85/35 43– ऋग्वेद– 7/104/5*
24. *ऋग्वेद– 9/88/7 44– ऋग्वेद– 9/83/1*
25. *ऋग्वेद– 2/27/3 45– ऋग्वेद– 2/1/10*
26. *ऋग्वेद– 8/5/17 46– ऋग्वेद– 10/130/3*
27. *ऋग्वेद– 8/10/147– ऋग्वेद– 4/54/11*
28. *ऋग्वेद– 19/5/5 48– ऋग्वेद– 6/51/3*
29. *ऋग्वेद– 3/30/14 49– अथर्व0– 16/2/6*
30. *ऋग्वेद– 1/92/10 50 –ऋग्वेद– 2/33/8 ऋग्वेद–*
31. *ऋग्वेद–2/24/9 2/2/4*
32. *ऋग्वेद– 1/34/6 51– ऋग्वेद– 1/43/5*
33. *ऋग्वेद– 10/130/3 52– ऋग्वेद– 1/165/12*
34. *ऋग्वेद– 8/55/3 53– ऋग्वेद– 8/25/22*
35. *ऋग्वेद– 5/53/3 54– ऋग्वेद– 1/88/2*
36. *ऋग्वेद– 2/32/2 55– ऋग्वेद– 1/88/2*